अध्याय–6

निष्कर्ष

प्राचीन भारतीय इतिहास में सभ्यता के विकास के साथ–साथ मानव की आवश्यकतायें भी बढ़ने लगीं। अन्य समुदायों द्वारा उपयोग में लायी जाने वाली वस्तुओं के उपयोग की इच्छा दूसरे समुदाय के लोगों में जागृत होने से परस्पर वस्तुओं के आादन–प्रदान की प्रथा का विकास हुआ। इस बस्तु–विनिमय से प्रत्येक को लाभ हुआ तथा आवश्यकता की बस्तुयें सभी को उपलब्ध होने लगीं। बस्तु–विनिमय सिक्कों के विकास का प्रथम सोपान है। ऋग्वेद में कई प्रकार के आभूषणों का वर्णन मिलता है, जिनका उपयोग विनिमय के लिए होता था जैसे– खदि, निष्क, रूक्म, हिरण्यपिण्ड, कर्णशोभन, शतमान, सुवर्ण आदि। प्रथमतः स्वर्ण आभूषण ही विनिमय का माध्यम बने, लेकिन जब सोना मूल्यवान प्रतीत हुआ तब उन्होंने चाँदी, तांबा आदि का प्रयोग किया। वैदिक कालीन आभूषण परवर्ती काल में अपना स्वरूप बदल रहे थे, जिससे विनिमय पर आधारित निर्वाह अर्थव्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। इस मौद्रिक विकास को मूल प्रेरणा आर्थिक जीवन के उस मोड़ पर मिली, जिसे "द्वितीय नगरीकरण" कहा जाता है। छठी शताब्दी ई.पू. में आहत सिक्कों के प्रादुर्भाव से मौद्रिक अर्थव्यवस्था का जन्म हुआ। तत्कालीन आहत सिक्के भी चाँदी एवं स्वर्ण खण्ड ही थे, जिनको मुद्रा का स्वरूप प्रदान किया गया। इन आहत सिक्कों पर कुछ प्रतीक चिह्न भी बना दिये जाते थे। भारत के

इन प्रचीनतम सिक्कों का नामकरण उनमें प्रयुक्त तकनीकि के आधार पर किया गया। इसीलिए इन सिक्कों को 1835 ई. में प्रिसेंप ने 'पंचमार्क' की संज्ञा प्रदान की। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में स्वर्ण, धरण, शतमान, कार्षापण, पण, माषक तथा काकिणी आदि विभिन्न सिक्के का नाम सन्दर्भित है। विभिन्न पुरास्थलों से बहुसंख्यक आहत सिक्के प्राप्त हुए हैं जिनमें अधिकांश चाँदी तथा कुछ तांबे के हैं। स्वर्ण कार्षापण का उल्लेख केवल साहित्य में हुआ है, उत्खननों में इनकी प्राप्ति नहीं हो सकी है। बस्तुतः भारत में रजत व ताम्र मुद्रायें, नामों की भिन्नता लिए हुए लगभग छठी शताब्दी ई.पू. तक भली–भाँति प्रतिष्ठित हो चुकी थीं।

प्राचीन भारतीय मुद्रा प्रणाली पर विविध अध्ययन किये जा चुके हैं। मुद्रा का उद्‌भव, उसके प्राचीनता तथा उसके विकास का इतिहास जैसे विषय इस पर काम करने वाले विद्वानों के मुख्य विषय रहे हैं। इसके अतिरिक्त सिक्कों की निर्माण प्रक्रिया, उन पर अंकित प्रतीक चिह्न, शासकों एवं देवी–देवताओं की आकृतियों का अध्ययन और तिथियों व उनमें प्रयोग में लायी जाने वाली कीमती धातु की मात्रा और सामन धातु से उनके मिश्रण का अनुपात आदि विषयों पर विद्वानों द्वारा किये गये अध्ययनों में पर्याप्त ध्यान दिया गया है। उहाहरणार्थ दुर्गाप्रसाद, पी.एल. गुप्ता तथा वाल्श जैसे विद्वानों ने प्राचीन सिक्कों पर चित्रांकित प्रतीक चिह्नों का गहन अध्ययन किया है। सिक्कों के अध्ययन की दूसरी विधा राजनीतिक इतिहास के निर्माण में सिक्कों से प्राप्त सूचनाओं के उपयोग की रही है जिस पर बहुत कार्य हुए है। पांचाल के मित्र शासकों तथा मालव व यौधेय आदि

गणराज्यों का पूरा इतिहास उनके सिक्कों के आधार पर ही लिखा गया है। इसके अतिरिक्त आर्थिक इतिहास के निर्माण में सिक्कों की भूमिका की भी महत्वपूर्ण विवेचना की गयी है। सिक्कों की अत्याधिक प्राप्ति, सिक्कों को ह्रास भारतीय आर्थिक इतिहास के युगों की विभाजक रेखा के रूप में एक महत्वपूर्ण कारक माना गया है। उत्तरकालनी गुप्त शासकों द्वारा जारी सोने के सिक्कों में सोने की अपेक्षा खोट की मात्रा अधिक थी, जिससे यह अनुमान लगाया गया कि इन शासकों की आर्थिक स्थिति दयनीय थी। लेकिन यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि मुद्राशास्त्र का प्रयोग अधिकतर आर्थिक इतिहास के गठन के लिए उतना नहीं किया गया है, जितना राजनीतिक इतिहास के निर्माण के लिए। मुद्राओं का विभिन्न धातुओं में पाया जाना, उनकी प्रमुखता या अनुपस्थिति आदि ऐस तथ्य हैं, जो प्राचीन भारतीय आर्थिक इतिहास को एक नयी दिशा प्रदान कर सकते हैं। यद्यपि इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु डी.डी. कोशाम्बी ने आहत सिक्कों का जो अध्ययन किया है वह बहुत महत्व का है। मुद्राओं के अध्ययन की एक अन्य विधा धार्मिक सूचनाओं की प्राप्ति की रही है। इस पर जे.एन. बनर्जी जैसे विद्वानों ने महत्वपूर्ण अध्ययन किया है। इसके अन्तर्गत शासकों द्वारा जारी सिक्कों पर विभिन्न देवी—देवताओं के चित्रांकन, उनसे सम्बन्धित प्रतीक चिह्नों व लेखांकनों को मुख्य विषय बनाया जाता है, जैसे कुषाण सिक्कों पर शिव, विष्णु, बुद्ध आदि से सम्बन्धित चित्रांकन एवं लेखांकन प्राप्त होते हैं। जो सहज ही इन शासकों की धार्मिक प्रवृत्तियों को प्रदर्शित कर देते हैं। इसी प्रकार

गुप्त कालीन सिक्कों पर "गरूढ़ध्वज" का अंकन "परमभागवत" जैसे लेखांकन भी सिक्कों की धार्मिक विधा के अध्ययन को विषय प्रदान करते हैं।

प्राचीन भारतीय सिक्कों की निर्माण प्रक्रिया में अपनायी गयी तकनीकों में एकरूपता प्रदर्शित नहीं हुई है। मुद्रा निर्माण की आहत प्रणाली से तैयार किये गये आहत सिक्कों में किसी तरह का लेख उपलब्ध नहीं है लेकिन इन सिक्कों पर बहुसंख्यक प्रतीक चिह्नों का चित्रांकन प्राप्त होता है। आहत सिक्के वर्गाकार, कोणाकार व मिश्रित आकार के प्राप्त हुए हैं। धातु की चद्दर से मानक वजन के बराबर चौकोर टुकड़े काट लिये जाते थे। इनको समान वजन का बनाने के लिए उनके कोनों को काट दिया जाता था, इसी कारण इनके आकार में भिन्नता आ जाती थी। देश के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न वजन प्रणाली थी, उनमें आनुपातिक सामंजस्य स्थापित करने हेतु वजन की समानता आवश्यक थी, ताकि व्यापारियों को एक दूसरे से क्रय–विक्रय सम्बन्धी कोई कठिनाई न हो। इसलिए सिक्कों के आकार से अधिक भार सामंजस्य पर ज्यादा बल दिया गया। इन अलग–अलग आकार के समान वजन वाले सिक्कों पर विभिन्न प्रतीक चिह्नों का चित्रांकन छेनी से ;च्नदबीद्ध होता था। अधिक सम्भव है कि यह प्रतीक चिह्न धातु की शुद्धता परीक्षण करने वाली संस्थाओं के चिह्न रहे हों। इस प्रकार मुद्रा निर्माण की आहत प्रणाली से प्रारम्भिक सिक्कों का निर्माण सहजता पूर्वक होता रहा। इसके बाद ढलुआ प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ। इस प्रणाली में मिट्टी या धातु के साँचे बनाकर गली हुई धातु को इन साँचों में डाल दिया जाता था। नैषधीयचरित व समंरागण सूत्र में ऐसे

साँचों का उल्लेख भी मिलता है। रोहतक, तक्षशिला, काशी, सांची, नालन्दा, मथुरा, अतरंजीखेड़ा, कोण्डपुर आदि पुरास्थलों से प्राप्त होने वाले साँचे उपरोक्त साहित्यिक उल्लेखों की पुष्टि करते हैं। 'टेक्नीक ऑफ कार्स्टिक वाइन्स इन इन्डिया' पुस्तक में बीरबल साहनी ने सिक्कों की ढलाई का अच्छा वर्णन प्रस्तुत किया है। मिट्टी के साँचों में जो लेख और चिह्न बने रहते थे व सिक्के पर अंकित हो जाते थे। सिक्के का ठीक उल्टा, उसके साँचे में बनाया जाता था, जब ठंडा होने पर मिट्टी के पूरे आकार को तोड़ा जाता था तो सीधी स्थिति में वही लेखांकन व चित्रांकन सिक्कों पर उभर आते थे। इस प्रणाली से एक साथ कई सिक्कों का निर्माण हो जाता था। लेकिन जब जालसाजों न इस प्रणाली को अपनाकर राजकीय टकसालों को धोखा देना प्रारम्भ किया तो एक साथ कई सिक्कों की निर्माण पद्धति को छोड़ दिया गया। इसके बाद ऐसी पद्धति अपनायी गयी कि सिक्का तैयार होने पर साँचे को ज्यों का त्यों बचा लिया जाता था, जिससे पुनः उन्हीं साँचों का प्रयोग किया जा सके। अतः साँचों को नष्ट होने से बचाने के लिए एक ही सिक्का ढालना उचित समझा गया। ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में कौशाम्बी, अयोध्या, मथुरा आदि में ढले हुए सिक्के तैयार किये जाते थे। जब से सिक्के ढाले जाने लगे तब से उनका आकार चौकोर से गोल कर दिया गया। इससे सिक्के देखने में सुन्दर लगने लगे। सिक्कों के निर्माण की एक अन्य विधि भी अपनायी गयी जिसे ठप्पा प्रणाली कहते हैं। इस विधि में गरम धातु के टुकड़े पर ठप्पे के दबाव से चिह्न अंकित किये जाते थे। बस्तुतः आहत निर्माण प्रणाली तथा ठप्पे मार कर सिक्के

बनाने की तकनीकि में अन्तर केवल इतना है कि जहाँ पहले लाँछन अलग–अलग बिम्ब टंकों से छापे जाते थे वहाँ अब एक ही ठप्पे में समेट लिया गया। इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण है कि इस पद्धति द्वारा निर्मित सिक्कों पर लेख अंकित करने का नया तत्व जुड़ गया और श्रम व समय की भी बचत होने लगी। स्वस्तिक, सिंह आकृति व बोधिवृक्ष आदि का चित्रांकन तक्षशिला की मुद्राओं पर प्राप्त होता है, जो ठप्पे मारकर तैयार किये गये हैं। जिन सिक्कों पर लेखांकन व चित्रांकन एक ही ओर होता था, दूसरा भाग सादा होता था, एसे सिक्के इकहरी ठप्पा प्रणाली से तैयार किये गये थे। सिक्को के दोनों ओर चित्रांकन व लेखांकन दोहरी ठप्पा प्रणाली के अन्तर्गत अपनाया गया। इसके अन्तर्गत सिक्कों को बनाने के लिए पहले नीचे वाले ठप्पे पर सिक्के के पृष्ठभाग के चिह्न का चित्रांकन किया जाता था। पुनः उस पर गरम धातु रखकर अग्रभाग के चिह्नों को द्योतित करने वाले ठप्पे से दबाव डाला जाता था। गन्धार में सबसे पहले दोहरी ठप्पे के सिक्के तैयार किये गये। बस्तुतः ठप्पा प्रणाली विदेशी पद्धति थी जिसे भारत में अपना लिया गया था। यूनानियों द्वारा लायी गयी ठप्पा प्रणाली ने भारतीय मुद्राओं को सुन्दर एवं कलात्मक बना दिया। तत्पश्चात भारतीय सिक्कों पर भी लेखांकन व तिथि का अंकन प्राप्त होने लगा। कुणिन्द, औदुम्बर, यौधेय, आर्जुनायन आदि गणराज्यों ने मुद्रा निर्माण की दोहरी ठप्पा प्रणाली को अपना लिया था। इसी प्रकार अयोध्या, मथुरा, कौशाम्बी, पांचाल जैसे जनपदों में भी दोहरे ढप्पों का प्रयाग होन लगा। लेकिन जब चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के प्रारम्भ में चन्द्रगुप्त मौर्य ने मार्य साम्राज्य की स्थापना की तो मुद्रानिर्माण

प्रक्रिया को अत्याधिक महत्व देते हुए राजकीय टकसालों को निर्माण करवाया। उसने "लक्ष्णाध्यक्ष" तथा "रूपदर्शक" जैसे अधिकारियों की नियुक्ति की। अर्थशास्त्र के अनुसार राज्य में सिक्कों का चलन किसी कानूनी निविदा पर ही आधारित नहीं था बल्कि वह विनिमय का माध्यम मात्र था। धातु की वरीयता के आधार पर अलग–अलग क्षेत्रों से लायी गयी सोने या चांदी की सिल्लियों की शुद्धता तथा निर्धारण कार्य पूर्णतया कानूनी निविदा के द्वारा ही सुनिश्चित किया जाता था। वे मुद्रायें जो अन्य लोगों द्वारा लायी सिल्लियों से निर्गत की जाती थीं, उनका प्रत्यक्ष मूल्य ही मान्य था न कि राज्य सरकार के कानूनी अधिकारियों के टेन्डर के दबाव या प्रोत्साहित करने पर। यद्यपि तांबे के धन का मुद्रण सरकार के कानूनी तौर–तरीके से हाता था। इसलिए उसकी शुद्धता भी प्रमाणित थी। अर्थशास्त्र से यह भी दृष्टिगत होता है कि राज्य सरकार ने सोने की निविदा के लिए कोई कानूनी बाध्यता नहीं रखी थी। यदि उचित ढंग, वजन व प्रमाणित सिक्कों का चलन पिछले समय के राजाओं या उनके राजवंशों के समय से हो रहा हो तो किसी कानूनी निविदा को सिक्के ढालने की अनुमति बिल्कुल नहीं थी। जबकि यह सुनिश्चित करना आवश्यक समझा जाता था कि सिक्के खजानों में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं कि नहीं। न्यूनाधिक रूप से लीगल टेन्डर या विनिमय के माध्यम से सिक्कों का चलन प्रमाणिक रूप से मध्यकाल तक चलता रहा। सोना, चाँदी तथा ताँबा जैसी धातुयें मुद्रा निर्माण में प्रयुक्त मुख्य धातुयें थीं। सामान्तया एक कार्षापण सोने, चाँदी या तांबे का होता था। सोने का कार्षापण या निष्क 89 रत्ती का था। कर्ष सिक्के की इकाई

थी। जबकि चाँदी के सिक्कों के मान्य वजन को धरण कहा जाता था, जो 32 रत्ती का था। वजन के स्तर पर ताँबे का कार्षापण 100, 150 और कभी—कभी 225 रत्ती तक पहुँच जाता था। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सोने, चाँदी व तांबे का वजन एक समान नहीं रहा। इसलिए इन धातुओं के मध्य आनुपातिक मूल्य भी सदैव एक समान नहीं रहा होगा। इस तथ्य की पुष्टि नासिक गुहालेख से भी होती है, जिसमें 70,000 कार्षापण को 2000 स्वर्ण मुद्राओं के बराबर बताया गया है। इस प्रकार स्वर्ण व रजत सिक्कों का मौद्रिक अनुपात 35:1 निकलता है। इसी प्रकार तांबे व सोने का मौद्रिक अनुपात 56:1 अनुमानित है।

बौद्धग्रन्थ विसुद्धिमग्ग में लिखा गया है कि रूपपरीक्षक सिक्कों को देखते ही बता सकता है कि कौन सा सिक्का किस ग्राम, नगर पर्वत या नदी तट का है और उसे बनाने वाला टकसाल कौन था। प्रारम्भ में आहत सिक्कों के अग्रभाग पर ही प्रतीक चिह्नों को चित्रांकित किया जाता था। कालान्तर में पृष्ठभाग पर भी अपेक्षाकृत छोटे व हल्के चिह्नों का अंकन प्राप्त होने लगा। वस्तुतः सिक्कों के पृष्ठभाग पर अंकित यह चिह्न सिक्का निर्माण करने वाली संस्थाओं की ओर से धातु की शुद्धता की व उचित भार की गारण्टी था। शुद्धता की जाँच के समय जाँचकर्ता सिक्के के पृष्ठभाग पर मोहर लगा देता था। यह चिह्न अत्यन्त हल्के अंकित किये जाते थे, जिससे अग्रभाग के चिह्नों की सुन्दरता बनी रहे। पृष्ठतल पर चिह्नों की अधिकतम संख्या चौदह और अग्रभाग पर पाँच या इससे अधिक चिह्न बड़े व स्पष्ट रूप से अंकित मिलते हैं। सूर्य, षडरचक्र,

अर्द्धचन्द्रयुक्त पर्वत, वृषभांकन, स्वस्तिक, उज्जयिनी चिह्न, पशु पक्षी, घेरे में वृक्ष, ज्यामितीय आकृति, धार्मिक चिह्न आदि प्रमुख चित्रांकन थे। आहत मुद्राओं की भाँति उन पर बने प्रतीक चिह्नों का स्वरूप भी स्वदेशी ही था। यह प्रतीक चिह्न भारतीय समाज, संस्कृति, धर्म व दर्शन से अवश्य जुड़े हैं। आहत सिक्कों पर अंकित "वृत्त में विन्दु" को परमब्रह्म तथा शिव का प्रतीक माना गया है। इसी तरह पशुओं को चित्रांकन भी उन देवताओं का प्रतीक माना गया है, जिसके वे वाहन माने जाते हैं, जैसे हाथी इन्द्र का वाहन होने के साथ–साथ श्रेष्ठ शक्ति का प्रतीक था। ऐसे ही शेर शक्ति, बहादुरी व निर्भीकता का प्रतीक था। आहत सिक्कों पर चित्रांकित नन्दी शिव का प्रतीक माना गया है। मोर युद्ध देवता कार्तिकेय का वाहन माना जाता है, इसे सिक्कों पर चित्रांकित करके सैन्य सफलता की कामना की गयाी होगी। सूर्य व षटकोण जैसे चिह्न तांत्रिक प्रतीक माने गये हैं। वासुदेव उपाध्याय का मानना है कि सूर्य, वृक्ष, नन्दी आदि ब्राह्मण धर्म से, चक्र (धर्मचक्र) तथा पीपल वृक्ष बौद्ध धर्म से सम्बन्धित थे। लेखरहित ढली हुई ताम्र मुद्राओं पर कुछ ऐसे भी चित्रांकन हैं जो आहत सिक्कों पर देखने को नहीं मिलते हैं, जैसे लक्ष्मी के अभिषेक का चित्रांकन तथा राज प्रासाद व वृक्षाश्रित स्त्री का अंकन आदि। बस्तुतः यह अंकन सिक्कों के विकास को प्रदर्शित करते हैं। जनपदीय मुद्रायें लेखयुक्त तथा लेखरहित दोनों प्रकार की थीं, जिन पर चित्रांकित प्रतीक चिह्न आहत सिक्कों के प्रतीक चिह्नों से समानता रखते हैं। इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि मुद्राशिल्पियों ने धार्मिक विश्वास, आर्थिक समृद्धि, शक्ति, विवेक आदि को प्रदर्शित करने वाले प्रतीक

चिह्नों को अपनी मुद्राओं पर स्थान दिया था। सातवाहनों की मुद्रायें स्थानीय प्रभाव से अधिक प्रभावित थीं, सम्भवतः इसी कारण इन मुद्राओं में कलात्मकता का अभाव दिखायी देता है। सातवाहनों ने अपने सिक्कों पर उज्जयिनी चिह्न, हाथी, स्वस्तिक, शेर, नन्दिपद, मेहराबों के साथ पहाड़ियाँ, मछली, वेदकिा में वृक्ष, चैत्य, लहरदार रेखायें, अर्द्धचन्द्र आदि प्रतीक चिह्नों को चित्रांकित करवाया। इसके अतिरिक्त शासक का नाम तथा उपाधि का लेखांकन भी प्राप्त होता है। गुप्त मुद्रा निर्माण का प्रारम्भ चन्द्रगुप्त प्रथम ने प्रारम्भ किया। इस काल की प्रारम्भिक मुद्राओं पर कुषाण शैली की झलक दिखायी पड़ती है। गुप्त सम्राटों को कुषाण वेश–भूषा में प्रदर्शित किया गया है, साथ ही पूजा विधि भी कुषाणों जैसी ही प्रतीत होती है। भारत में यह प्रथा थी कि हवन नंगे शरीर बैककर किया जाता था। लेकिन गुप्त मुद्राओं पर कुषाणों की तरह वस्त्र व जूते पहन कर खड़े होकर आहुति देते हुए चित्रांकित किया गया है। यद्यपि धीरे–धीरे इनमें भारतीयता लाने का प्रयास किया गया। समुद्रगुप्त ने गरूड़ध्वज, धनुर्धारी, परशु, वीणा, व्याघ्रनिहन्ता तथा अश्वमेध शैली की मुद्रायें जारी कीं। चन्दगुप्त द्वितीय ने अपने पिता समुद्रगुप्त के मुद्रानिर्माण आदर्श को अपनाते हुए, नयी शैली की मुद्रायें जारी कीं। धनुर्धारी , सिंहनिहन्ता, अश्वारोही, छत्र पर्यंक, पर्यंक स्थित राजा–रानी, ध्वजाधारी, चक्रविक्रम शैली की मुद्रायें चन्द्रगुप्त द्वितीय द्वारा जारी की गयीं। सम्भवतः इसी लिए चन्द्रगुप्त द्वितीय ने अश्वमेध यज्ञ नहीं किया और न ही अश्वमेध शैली के सिक्के जारी किये। कुमारगुप्त के समक्ष समुद्रगुप्त तथा चन्द्रगुप्त के मुद्रा आदर्श विद्यमान थे। कुमारगुप्त के सिक्कों पर

राजा–रानी शैली के सिक्कों का प्रभाव दिखायी देता है, जिसका प्रचलन समुद्रगुप्त के समय नहीं था। इसी प्रकार कुमारगुप्त ने समुद्रगुप्त के ब्याघ्रनिहन्ता शैली, अश्वमेध शैली तथा वीणा शैली के सिक्कों को प्रोत्साहित किया, जिसे चन्द्रगुप्त द्वितीय के समय महत्व नहीं दिया गया था। उसकी धनुर्धारी अश्वारोही व छत्र शैली की मुद्राओं पर चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिक्कों का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इसके अतिरिक्त कुमारगुप्त ने कार्तिकेय शैली, खड्ग शैली, गजारोही शैली, गजारूढ़ शैली तथा अप्रतिघ शैली जैसी मुद्रायें जारी कीं। इस प्रकार कुमारगुप्त का काल मुद्रानिर्माण की गुप्त परम्परा के परिवर्द्धन व नवीन उपलब्धियों के समिश्रण का काल था। समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त द्वितीय व कुमारगुप्त की स्वर्ण मुद्राओं में जो सुन्दरता व विविधता प्रदर्शित की गयी है, वह स्कन्दगुप्त के सिक्कों में नहीं दिखायी देती है। स्कन्दगुप्त द्वारा जारी धनुर्धारी शैली की मुद्रायें अधिक लोकप्रिय हुईं। लेकिन स्कन्दगुप्त के उपरान्त कोई ऐसा गुप्त शासक न हो सका जो गुप्त मुद्रा परम्परा के आदर्श को बनाये रखता।

इस प्रकार यूनानियों के भारत आगमन के बहुत पूर्व यहाँ बहुमूल्य धातुओं की अपनी देशी मुद्रा थी। यह मुद्रायें प्रतीक चिह्नों, भारमान, धात्विक अनुपात व मौद्रिक विनिमय जैसे विभिन्न क्षेत्रों में अपनी विशिष्ट मौलिकता से सम्पन्न थीं। लेकिन इस तथ्य को भी नकारा नहीं जा सकता कि मुद्रा निर्माण के विकास को हिन्द–यवन, शक, पह्लव, कुषाण तथा रोमन जैसी विदेशी मुद्रा परम्पराओं ने यहाँ की देशी मुद्रा पर अविस्मरणीय छाप छोड़ी। विदेशी परम्परा के अन्तर्गत मुद्रा जारी करना शासक का विशेषाधिकार था,

उस पर उसका नाम, उसकी उपाधि तथा अधिकाशतः उसका चित्र भी अंकित होता अनिवार्य था। बस्तुतः हिन्द–यवन मुद्रा आदर्श का अनुकरण शक, पह्लव और कुषाणों ने भी किया। हिन्द–यवन राजाओं ने सोने, चाँदी तथा तांबे के सिक्के जारी किये। मुद्राओं पर यूनानी व खरोष्ठी लिपि में लेखांकन का प्रारम्भ डेमेट्रियस द्वितीय से हुआ। लेकिन पेण्टालिओन व एगाथोक्लीज ने ब्राह्मी लिपि तथा यूनानी लिपि में भी लेखांकन करवाया। हिन्द–यवन सिक्कों के पृष्ठभाग पर जियस, हेराक्लीज, अपोलो, पोसीडन, डियोस्कारोइ, पल्लस निके, आर्तमीज आदि देवी–देवताओं का चित्रांकन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त कैडुकस, पिलोई, ट्राइपाड, लिविस आदि का अंकन हुआ है। राजाओं व उनके नामों तथा उपाधियों का अंकन सिक्कों के अग्रभाग पर हुआ है। यूनानी लिपि में बेसिलिओस, निकेफराउ, स्ट्रेटोनास, मेगालउ, एनिकेटाउ, डिकाइसो तथा खरोष्ठी लिपि में त्रतस, अपडिहतस, जयधरस, महरजस, त्रतरस, ध्रमिकस आदि लेखांकित है। सामन्तया मुद्राओं पर यूनानी अक्षरों से बने मोनोग्राम भी मिलते हैं। हिन्द–यवन राजाओं की भाँति शकों ने सोने के सिक्के नहीं प्रचलित किये, इन्होंने चाँदी व तांबे के गोल तथा चौकोर मुद्रायें जारी कीं। मोयस, एजेस प्रथम आदि की मुद्राओं पर यूनानी अनुकरण की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। पश्चिमी क्षत्रपों की अधिकांश मुद्रायें चाँदी की हैं, जिनपर हिन्द–यवन शासकों, विशेषकर अपोलोडोटस के चाँदी के सिक्कों का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इनके सिक्कों का अग्रभाग हिन्द–यवन सिक्कों के समान है। पृष्ठभाग खरोष्ठी व ब्राह्मी लिपि में लेखांकित है, लेकिन चष्टन के बाद सिक्कों पर खरोष्ठी लिपि में

लेखांकन समाप्त हो गया। जीवदामन के समय जो सिक्कों पर तिथि का अंकन प्रारम्भ हुआ वह रूद्रसिंह तृतीय तक चलता रहा। पश्चिमी क्षत्रपों के चांदी के सिक्कों के पृष्ठभाग पर अर्द्धचन्द्र, तारे, लहरदार रेखांये, चैत्य, विन्दु समूह, शासक का उपाधि सहित नाम का अंकन मिलता है। ताम्र मुद्राओं के अग्रभाग पर हाथी, वज्र, त्रिशूल, घोड़ा, वाण, पृष्ठभाग पर घेरे में वृक्ष, स्तम्भ शीर्ष, चैत्य, तारे आदि का चित्रांकन राजा व उसकी उपाधि के साथ मिलता है। पह्लव शासक बोनान के सिक्कों पर भी हिन्द–यवन शासक यूक्रेटाइडीज की मुद्राओं का अनुकरण किया गया है। इसके बाद स्पलरिसस व गोण्डोफर्नीज द्वारा जारी सिक्कों पर भी हिन्द–यवन सिक्कों की झलक मिलती है। प्रथम शताब्दी ई. से शक–पह्लव शासकों का प्रभुत्व समाप्त हो गया। कुषाण साम्राज्य के शासकों ने विविध शैली के सिक्के जारी किये। कुषाणों ने अपनी स्वर्ण मुद्राओं की तौल डेनेरियस नामक रोमन सिक्कों के आधार पर 124 ग्रेन निर्धारित की। कुषाण मुद्राओं पर राजा को लम्बे कोट, पायजामे, उँचे जूते धारण किये हुए दर्शाया गया है। इन सिक्कों पर यूनानी तथा खरोष्ठी लिपि में लेखांकन भी मिलता है। सम्भवतः इन सिक्कों पर दर्शायी गयी वेश–भूषा पारसीक सिक्कों से ग्रहण की गयी होगी। कुजुल कैडफिसस तथा विम कैडफिसस के सिक्कों पर देवी–देवताओं का अंकन सीमित है लेकिन हुविष्क के समय यह परम्परा शिखर पर थी। कुषाणों ने अपनी मुद्राओं के पृष्ठभाग पर यूनानी, रोमन, ईरानी तथा भारतीय देवी–देवताओं को चित्रांकित करवाया। यूनानी तथा रोमन देवी–देवताअें में हेराक्लीज, हेलियोस सलिन, हिफेस्ट्रोस, जियस, उरेनस, रिओम, सेरपिस

आदि का चित्रांकन कुषाण मुद्राओं पर समान्यता प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त कुषाण मुद्राओं पर मिहिर, माओ, फैरो, अथशो, ओयडो, लुहरैस्य, अहुरमज्दा, शाओशोरो, नना आरदोक्षो जैसे ईरानी देवी–देवताओं का चित्रांकन भी प्राप्त होता है। कुषाणों ने उच्चकोटि का मुद्रा आदर्श प्रस्तुत किया, जिसमें कलात्मक, विविधता, धर्मनिरपेक्षता आदि का समन्वय देखने को मिलता है। लेकिन प्राचीन भारतीय इतिहास के अन्तर्गत विदेशी मुद्रानिर्माण परम्परा द्वारा जीते गये प्रदेशों की मुद्रा शैलियों में उन्होंने ससैनियन सिक्कों का अनुकरण किया, कश्मीर में परवर्ती कुषाणों का और शेष क्षेत्रों में गुप्तों की मुद्रा परम्परा को अपनाया।

प्राचीन भारतीय मौद्रिक इतिहास में जब देशी एवं विदेशी मौद्रिक परम्पराओं को एक दूसरे का सानिध्य मिला तो उनमें क्रिया–प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक था। इस क्रिया–प्रतिक्रिया ने सिक्कों के स्वरूप, निर्माण, लेखांकन व चित्रांकन आदि को प्रभावित किया। आहत सिक्कों व यूनानी सिक्कों के मध्य आकार–प्रकार, वजन, चित्रांकन व लेखांकन में मौलिक अन्तर था, इसलिए इनके मध्य कोई तारतम्यता नहीं स्थापित की जा सकती। अतः भारत की प्रारम्भिक मुद्रायें (आहत मुद्रायें) पूर्ण मौलिक थीं, उनमें किसी बाह्य परम्परा का प्रभाव नहीं पड़ा। लेकिन जब यूनानी सिक्कों का सम्पर्क भारतीय मुद्राओं से हुआ तब से विदेशी परम्परा के अन्तर्गत सिक्के जारी करना राजा का ही विशेषाधिकार बन गया। अधिकाशतः राजा का चित्रांकन और उसके नाम व उपाधि का लेखांकन अनिवार्य हो गया। हिन्द–यवनों के चाँदी के सिक्कों को "ड्रैक्म" कहा जाता था

जिसे भारतीयों ने "द्रम" की संज्ञा दी; इसी का विकृत रूप "दाम" वर्तमान में पैसे के अर्थ में प्रयुक्त होता है। यहाँ रोमन "डेनेरियस" को अपनाया गया जिसे कालान्तर में गुप्त लेखों में "दीनार" कहा गया। देशी एवं विदेशी तत्वों के मध्य यह सामंजस्य स्थापित होता रहा। डेमेट्रियस पहला यूनानी शासक था, जिसने सिन्ध तथा पंजाब पर अधिकार करके लगभग 183 ई.पू. में हिन्द–यवन राज्य की स्थापना की। इसके द्वारा जारी सिक्कों पर यूनानी लिपि के साथ ही साथ उस क्षेत्र में प्रचलित खरोष्ठी लिपि में भी लेखांकन प्राप्त होता है। यही नहीं इन सिक्कों पर भारतीय उपाधियों जैसे– "अपराजितस" "महरजस तथा इन्द्रदेवता" का प्रतीक वज्र धारण किये पुरूष आकृति का चित्रांकन भी प्राप्त होता है। इसी तरह एगाथोक्लीज के कुछ सिक्कों पर तारों से आच्छादित स्तूप का चित्रांकन प्राप्त होता है। इन स्तूप वाले सिक्कों के पृष्ठभाग पर खरोष्ठी लिपि में "हितजसम" लेखांकित है। स्तूप, तारे या नक्षत्र का अंकन भारतीय सिक्कों के विषय रहे हैं। स्तूप बौद्ध धर्म का प्रतीक था, विदेशियों के सिक्कों पर इसका चित्रांकन भारतीय मौद्रिक परम्परा से उनके सामंजस्य को प्रदर्शित करता है। यहाँ इस तथ्य का उल्लेख भी आवश्यक है कि बौद्धभिक्षु नागसेन से प्रभावित होकर हिन्द–यवन शासक मिनेण्डर ने बौद्ध धर्म ग्रहण कर बौद्ध हो गया थां अतः धर्म परिवर्तन की अपेक्षा सिक्कों पर भारतीय तत्वों का चित्रांकन व लेखांकन सामान्य बात थी। जिस प्रकार मिनेण्डर बौद्धधर्म से प्रभावित था, इसी प्रकार एगाथोक्लीज के कुछ सिक्के, जो अफगानिस्तान के आइखनम से प्राप्त हुए हैं, के चित्रांकन के आधार पर उसके वैष्णव धर्म के सानिध्य का संकेत देते

हैं। इन सिक्कों पर पॉल बर्नाड मानव सदृश विष्णु व शिव का चित्रांकन स्वीकार करते हैं। विष्णु का मानव सदृश चित्रांकन पांचाल शासक विष्णुमित्र के सिक्कों पर भी मिलता है। यवनदूत हेलियाडोरस का बेसनगर गरूड़स्तम्भ भी यवनों के वैष्णव धर्म के झुकाव की ही बात स्पष्ट करता है। अतः हिन्द–यवनों के सिक्कों पर भारतीय धर्म से सम्बन्धित तत्वों के चित्रांकन से यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने भारतीयों से प्रागढ़ सामंजस्य स्थापित कर लिया था। दूसरी ओर भारतीय मुद्राओं पर लेखांकन हिन्द–यवन सिक्कों के ही अनुकरण पर हुआ। जनपदों तथा गणराज्यों ने भी लेखयुक्त सिक्के जारी करने प्रारम्भ कर दिये। तक्षशिला के प्रथम शक क्षत्रप मोग अथवा मोयस के एक सिक्के के अग्रभाग पर बांयें हाथ में लम्बा त्रिशूल लिए यूनानी देवता का चित्रांकन प्राप्त होता है। इस चित्रांकन में देशी एवं विदेशी तत्वों के मध्य सुन्दर सामांजस्य देखने को मिलता है, क्योंकि आदि देवता शिव के प्रतीक त्रिशूल को यूनानी देवता पोसीडीन के हाथों में चित्रांकित किया गया है। जीवदामन के समय से प्रारम्भ तिथि अंकन की परम्परा को चन्द्रगुप्त द्वितीय ने भी अपने चाँदी के सिक्कों में अपनाया। पह्लव सिक्के भी भारतीय तत्वों के अनुकरण से न बच सके। हिन्द–यवन, शक, पह्लव आदि के सिक्कों पर जो शिव, विष्णु लक्ष्मी आदि देवी–देवताओं अंकन प्राप्त होता है, उनकों दर्शाने की शैली बिल्कुल यूनानी या ईरानी देवी–देवताओं जैसी ही है। निःसन्देह भारतीय देवी–देवता कुषाण शासकों के भी अन्तःकरण में स्थान बना चुके थे। विम कैडफिसस के सिक्कों पर प्रभामण्डल युक्त, नन्दी के सहारे खड़े दाहिने हाथ में लम्बा त्रिशूल लिए शिव का स्पष्ट

चित्रांकन किया गया है। भाष्कर चट्टापाध्याय का कहना है कि कनिष्क के सिक्कों पर शिव का नाम "आइशो" प्राप्त होता है। शिव के चतुर्भुज रूप का चित्रांकन कनिष्क के कुछ सिक्कों पर मिलता है। हुविष्क की मुद्राओं पर भी शिव को कनिष्क की मुद्राओं की भाँति ही दर्शाया गया है। हुविष्क ने ताम्र मुद्राओं पर धनुष चलाते गणेश भगवान का भी चित्रांकन करवाया है। लेकिन वासुदेव की कुछ मुद्राओं पर चार भुजाओं वाले त्रिमुखी शिव का चित्रांकन भी मिला है, जिनकी भुजाओं में पाश, कमण्डल, त्रिशूल तथा सिंह–चर्म प्रदर्शित किया गया है। कहने का तात्पर्य है कि इन शासकों को भारतीय संस्कृति ने बहुत प्रभावित किया, जिसके कारण इन्होंने इस संस्कृति के विभिन्न तत्वों को अपना कर उन्हें अपने सिक्कों के माध्यम से प्रदर्शित किया। लेकिन यह महत्वपूर्ण है कि कुषाण मुद्रा परम्परा और प्रारम्भिक गुप्त मुद्रा परम्परा के बीच सुन्दर सामंजस्य देखने को मिलता है। कुषाण शासकों की तरह गुप्त सम्राट भी बन्द गले का कोट, पायजामा अथवा पतलून, जूते धारण किये खड़े होकर अग्नि में आहुति देते हुए, सिक्कों पर चित्रांकित हैं। कुषाण व गुप्त मुद्राओं के अति सामंजस्य का ही प्रतिफल था कि गुप्त मुद्राशिल्पियों ने कुषाण मुद्राओं के कुछ यूनानी अक्षरों को अर्थ समझे बिना ही उन्हें अपनी मुद्राओं पर अंकित कर लिया। इसके अतिरिक्त गुप्त कालीन चाँदी की मुद्राओं पर शक मुद्राओं के समान राजा की नाक को भी नुकीली प्रदर्शित किया गया। लेकिन शनैः शनैः परिवर्तन करके इन विदेशी तत्वों में भरतीयता लाने का प्रयास होने लगा। रोमन तथा कुषाण सिक्कों पर कार्नकोपिया लिए देवी अरदोक्षो का अंकन समान्तया होता था, जिसे गुप्तों ने सिंहवाहिनी

दुर्गा के रूप में परिवर्तित कर दिया अथवा उन्हें कमलासीन लक्ष्मी का रूप प्रदान कर दिया गया। कार्नकोपिया का स्थान कमल पुष्प ने ले लिया। ध्वजा को परशु या धनुष के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। सीथियन ऊँची टोपी का स्थान भारतीय उष्णीश ने ले लिया। लेकिन विदेशी कोट, पतलून कई पीढ़िया तक समय–समय पर परिलक्षित होता रहा।